संपादकीय

संपादकीय तथा स्तंभ लेखन मेरे लिए सदैव एक अति दुष्कर कार्य रहा है। हर दिन, हर हफ्ते, हर माह नियतकालिक लेखन की कला आजपर्यंत न साध पाया, और न रचना की उस प्रक्रिया को ही समझ बूझ पाया जिससे कि दिन और घंटों के हिसाब से कैलेंडर और घड़ी के कांटों से जुगलबंदी करते हुए अनवरत रचनाएं, लेख, कविताएं प्रसूत होती रहती हैं। फिर लेखन के औचित्य को लेकर भी बड़ी शंका रहती है मन में, कि जब चारों ओर समाचार पत्रों में, पत्रिकाओं में,नित विमोचित अनगिनत किताबों में, सोशल मीडिया की अंतहीन दीवारों पर, हर पल, हर क्षण इतना कुछ रचा जा रहा है या कहें कि लिखा जा रहा है तो फिर अब और क्या और क्यों लिखा जाए? हर बार कुछ भी लिखने के पहले मुझे इस दुर्निवार्य दुविधा से अनिवार्य रूप से गुजरना पड़ता है। पर आज सुबह का अखबार पढ़ते ही तात्कालिक प्रतिक्रिया स्वरूप पहले तो मन मस्तिष्क कुछ समय के लिए मानो जड़ हो गया हो, पर कुछ ही क्षणों बाद मन अपनी व्यथा लिखने को अधीर हो उठा। चुनावी समाचारों, घनघोर बयानबाजियों के घटाटोप के बीच आंचलिक खबरों के आंचल में, बहुत बड़ी दुर्घटना की इक छोटी सी खबर छपी थी कि बस्तर के इंद्रावती नदी का ऐतिहासिक चित्रकोट जलप्रपात, जिसके एशिया का सबसे बड़ा जलप्रपात होने का सरकारी दावा किया जाता है, इस अप्रैल के शुरुआत में ही पूरी तरह सूख गया है। पिछले एक हफ्ते से इस जलप्रपात में एक बूंद पानी नहीं है। मन नहीं माना तो वहां जाकर देखा, सचमुच इंद्रावती नदी वहां पूरी तरह सूख गई है, और उसी के साथ अनवरत गर्जना करने वाला वह जलप्रपात जिसकी आवाज कानों में मीलों दूर से गूंजती रहती थी, वह सचमुच पूरी तरह से खामोश हो चला है। इस ऐतिहासिक जलप्रपात चित्रकोट को एक पर्यटन स्थल के रूप में विकसित किया गया है। पर्यटक आज भी पिकनिक मनाने आए हुए हैं। ऊपर पानी कहीं नहीं है, जलप्रपात मर गया है, पर उससे किसी को क्या फर्क पड़ता है, जलप्रपात के नीचे जो ठहरा हुआ जल है उसमें नहा रहे हैं, जलक्रीड़ा कर रहे हैं तथा आनंद मना रहे हैं। कल यह जल भी अगर खत्म हो जाए तो किसी को क्या फर्क पड़ता है, पिकनिक के लिए कोई और दूसरी जगह तलाश लेंगे।

साक्षात्कार

कलाकृतियों के लिए उचित मार्केटिंग व्यवस्था हो

राष्ट्रपति पुरस्कार से पुरस्कृत लौह शिल्पी **सोनाधर पोयाम** से **मधु तिवारी** की बातचीत

प्र. लौह शिल्प कला की ओर आपका रुझान कैसे हुआ। इसकी प्रेरणा कहां से मिली?

उ. हमारा यह कार्य परंपरागत रूप में चला आ रहा है, लेकिन मुझे प्रेरणा अपने पिता से मिली और उन्हें ही मैं अपना गुरु मानता हूं। मैंने उनसे महीनों प्रशिक्षण प्राप्त किया है।

प्र. सबसे पहले आपने कौन सी कलाकृति बनाई?

उ. मैंने सबसे पहले घोड़े की आकृति बनाई थी 1986 में और उस घोड़े का पूर्व स्वरूप जो सिर्फ दो पैर का घोड़ा बनाने का था मैंने उसे चार पैर वाला बनाया। मेरे लिए बड़ी बात यह रही कि उसी वर्ष भोपाल (म.प्र.) से आदिवासी लोक कला परिषद से कुछ लोग कोण्डागांव आए निरीक्षण व जानकारी के लिए। उनके द्वारा मेरी बनाई कलाकृति को प्रशंसा तो मिली ही साथ ही उन्होंने उसे धार, झाबुआ, सागर, आगरा, दिल्ली तक पहुंचाया। दिल्ली में उस कलाकृति का चयन कर जब मुझे राष्ट्रीय स्तर पर सम्मान हेतु आमंत्रण मिला तो मुझे यह पता ही नहीं था कि ये क्या हो रहा है। मैंने ऐसा क्या विशेष किया है जिसके लिए दिल्ली बुलाया गया हूं। खैर मैं दिल्ली जैसे-तैसे बिना कुछ सोचे-समझे पहुंच गया। वहां जाकर देखा तो मेरी कलाकृति अलग से सजाई गई थी जिसे देखकर भी मैं समझ नहीं पाया था। जब वहां मुझे 1987 में तत्कालीन राष्ट्रपति महामहिम श्री आर वेंकट रमन के हाथों सम्मान मिला और लोग उसके बारे में मुझसे जानना चाहते थे तब मैंने सोचा कि शायद मैंने कुछ अलग काम किया है मैंने वहीं से आज तक निरंतर यह सफर एक नई ऊर्जा के साथ नित-नई कलाकृतियां बनाने में करता ही गया।

प्र.पहले और अब की कलाकृतियों में क्या अंतर पाते हैं?

उ. बदलते समय के साथ बहुत ज्यादा परिवर्तन हुए हैं। आज कलाकृतियां पारंपरिक धात्विक रंगो से हट कर, हर रंगों में उपलब्ध हो रही हैं। मेरे द्वारा स्वयं 2डी, 3डी कलाकृतियों का निर्माण किया जा रहा है। और इस तरह का निर्माण करने वाले प्रथम शिल्पकार के रूप में भी देश, विदेशों के महत्वपूर्ण संग्रहालयों मे मेरी कृतियां लगाई गई हैं।

प्र. आपने कहां तक स्कूली शिक्षा प्राप्त की है?

उ. मैं कक्षा दसवीं तक शिक्षा ग्रहण किया हूं। स्कूल बहुत दूर था साथ ही आर्थिक स्थिति भी अच्छी नहीं थी इसलिए पिता के साथ हाथ बंटाने लगा।

प्र. आप कलाकृति बनाने में रंगो का चुनाव कैसे करते हैं?

उ. मुझे तो पारंपरिक धात्विक रंग की कलाकृतियां ही भाती हैं लेकिन समय की मांग व उपयोग के अनुसार कलाकृति को आकर्षक बनाने हेतु विषयवस्तु पर आधारित रंगो का भी चुनाव करता हूं।

प्र. आपके इस काम में सबसे ज्यादा सहयोग किसका मिलता है?

उ. चूंकि हमारा ये पारंपरिक कार्य है इसलिए सभी इस कार्य को करते हैं, लेकिन सबसे ज्यादा सहयोग मेरे दोनों बेटों से मिलता है मुझे। वे इस कार्य में रुचि ले रहे हैं।

प्र. क्या आपका जीवन-यापन इससे हो पाता है?

उ. मैं शिल्प कला के साथ-साथ खेती -किसानी भी करता हूं। इसलिए दोनों मिलाकर आराम से जीवन-यापन चल ही रहा है।

प्र. कलाकृतियां बनाने के लिए कच्चा माल कहां से लाते हैं?

उ. पहले कई बार हमें रायपुर से भी कच्चामाल जाकर लाना पड़ता था किंतु आज कोण्डागांव में सब बड़ी आसानी से मिल जाता है।

प्र. कलाकृतियों को बेचने के लिए बाजार कहां मिलता है?

उ. मेरे गृह ग्राम कुसमा में भी इसका निर्माण होता है, कोण्डागांव में इसका शोरूम है जहां बाहर से आए पर्यटकों के लिए यह मुख्य आकर्षण होता है। इसके साथ ही दिल्ली, आगरा, गुजरात, अहमदाबाद, हैदाराबाद, मुंबई, पुणे में समय-समय पर प्रर्दशनी लगाई जाती हैं। कभी शासकीय व कभी प्राईवेट एन.जी.ओ. द्वारा भी आर्डर में काम मिलता रहता है। पर अभी कलाकृति बेचने के लिए अच्छी अवस्था नहीं है।

प्र. आप शासन से कैसी अपेक्षा रखते हैं?

उ. शासन से मैं हमारे कलाकारों द्वारा बनाई कलाकृतियों के लिए उचित मार्केटिंग (बाजार) व्यवस्था की मांग लगातार करता रहा हूं। जहां हमारे परिश्रम का उचित मूल्य मिले। हमारी